International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(4): 61-64

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(4): 61-64
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 01-05-2019
Accepted: 05-06-2019

Dr. Mona Bala
Guest Faculty, P.G. Deptt. Of Sanskrit, Patna University, Patna, Bihar, India

Correspondence
Dr. Mona Bala
Guest Faculty, P.G. Deptt. Of Sanskrit, Patna University, Patna, Bihar, India

वेदों में वर्णित युद्धकला

Dr. Mona Bala

सारांश
विश्व साहित्य में वेद का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। वेद वे ग्रन्थ हैं जिसमें सभी प्रकार की विद्याओं का वैज्ञानिक तथ्य दिखायी देता है। वेओं में युद्धों का वर्णन उपलब्ध है। इन्द्र को सर्वाधिक शक्तिशाली देवता के रूप में वर्णित किया गया है। इन्द्र अपनी शक्ति से वर्षा कराते हैं, निरीह प्राणी (गाय) को छुड़ाते हैं। अथर्ववेद में राजा और उसके वीर सैनिकों का वर्णन है, जिसमें युद्धकला का वो वर्णन प्राप्त होता है जो आधुनिक युद्धकला का मूल माना जा सकता है। वेद काल में युद्धकला इतनी सक्षम थी कि वो आधुनिक युद्धकला के मूल में उपस्थित थी। युद्ध और योद्धा के द्वारा राष्ट्र की सुरक्षा असंदिग्ध मानी जाती है। अर्थववेद में योद्धा और सेना की सुदृढ़ता का वर्णन प्राप्त होता है। योद्धा को सुदक्ष होना चाहिए एवं निविघ्न अपने कार्य का समापन करने वाला बताया गया है। युद्ध में शत्रु को ध्वस्त करने हेतू मनोवैज्ञानिक एवं सैद्धान्तिक दोनों प्रकार के युद्धकला का वर्णन प्राप्त होता है। इन ऋचाओं में आधुनिक युद्धकला के संकेत प्राप्त होते हैं।

मुख्य शब्द– वेद, सेना, इन्द्र, योद्धा, युद्धकला

प्रस्तावना
विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ के रूप में वेद आते हैं। वेदों में समस्त ज्ञान का भण्डार है। भारतीय मूल बोध की भावना का वर्णन वेदों में उल्लेखित है। वेदों में सभी प्रकार के विषयों के बारे में बताया गया है चाहे वह प्राचीन भाषाशास्त्र हो, प्राचीन इतिहास हो, भूगोल हो या कि गणित, ज्योतिष, स्वर शास्त्र, काव्यशास्त्र या धर्म । सभी का मूल स्वरूप वेदों में प्राप्त होता है। मनुस्मृति में 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्' की उद्घोषणा की गई है। साथ ही चारों वर्णो का, चारों आश्रम का तथा भूत, भविष्य एवं वर्त्तमान तीनों का सम्बन्ध वेद से बताया गया है, वेदों में सम्पूर्ण ज्ञान निहित है––

भूतं भव्यं भविष्यच्य सर्वं वेदात्प्रसिध्यति ।।[1]

ऋग्वेद में मानव के प्रकृति से प्रगाढ संबंधों के बारे में पता चलता है। ऋग्वेद की प्रार्थनाओं में मानव की सार्वभौम कामना का स्पष्ट वर्णन हुआ। ऋग्वेद की स्तुतियों में जहाँ एक सरल उद्भावना प्रत्यक्ष रूप लेती है। ऋग्वेद में सर्वाधिक ऋचाएँ महान देव इन्द्र को समर्पित है। अग्नि, सवितृ, सूर्य, उषा आदि को भी ऋचाएँ समर्पित की गई हैं। ऋग्वेद में इन्द्र को बड़ा शक्तिशाली बताया गया है। इन्द्र को ऋग्वेद संहिता के कुल सूक्तों के चतुर्थांश का भाग प्राप्त है। प्रायः 250 सूक्त अकेले इन्द्र को समर्पित हैं। ये प्रधान वैदिक देवता हैं। इन्द्र में प्राकृतिक दृश्य की अपेक्षा मानवीय स्वरूप का वर्णन अधिक सुलभ है। इन्द्र की शौर्य गाथा से ऋग्वेद भरा पड़ा है। इन्द्र शब्द का निर्वचन करते हुए यास्क महोदय ने कहा है–

इन्द्रः इरां दृणातीति वा ।[2]
अर्थात् इरा अन्न का विदारण करने वाले है।
इन्द्रन् शत्रुणां दारयिता वा ।[3]
अर्थात् शत्रु का विदारण करने वाला।
इन्दन् शत्रुणां द्रावयिता वा ।[4]

अर्थात् शत्रुओं को भगाने वाला है। वैसे तो यास्क महोदय ने इन्द्र के अन्य गुणों की चर्चा भी विस्तार से की है। इन्द्र को अत्यंत बलवान स्वरूप में स्थान मिला है उसकी शक्ति वर्णन करते हुए कहा गया है कि उसने ही कांपती हुई पृथ्वी को दृढ़ किया –

यः पृथवीं व्यथमाना महंदृहह्यः पर्वतान्प्रकुपितां अरम्णात् ।
यो अन्तरिक्षं विममे वरीयो यो द्यामस्तभ्नात्स जनास इन्द्रः ।।[5]

इन्द्र को दस्युओं को मारने वाला बताया गया है। इन्द्र को गौण रूप से युद्ध का देवता माना गया है। इन्द्र–वृत्र युद्ध में मेघ और विधुत का संघर्ष है। डा. उमाशंकर शर्मा 'ऋषि' ने वृत्र को वस्तुतः एक काल्पनिक दैत्य माना है ।[6] वास्तव में अनावृष्टि से सर्व जन में उदासी थी । वृत्र ने मेघों में वृष्टि रोक रखा था इन्द्र ने अपने वज्र से वृत्र का मोचन किया । इस पूरे युद्ध वर्णन में विधुत् को इन्द्र का वज्र माना गया है वहीं वृत्र को मेघ का प्रतीक बताया गया है। इन्द्र को वृत्र अथवा अहि का भेदन करने वाला अथवा विनाशक कहा गया है–

यो हत्वाहिमहिणात्सप्तसिन्धून्यो गा उदाजदपधा वलस्य ।
यो अश्मनोरन्तेरग्निं जजान संवृक्समत्सु स जनास इन्द्रः।। [7]

इन्द्र को बारम्बार 'वृत्रहन्' से सम्बोधित किया गया है यह सम्बोधन 75 बार आया है। इन्द्र को सर्वाधिक सम्पन्न शक्तिशाली देव के रूप में स्थापना प्राप्त है। इसी कारण इन्द्र को सम्पूर्ण जगत का एकमात्र शासक बताया गया है –

यो जात एव प्रथमो मनस्वान्देवो देवान्क्रतुना पर्यभूषत् ।
यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेतां नृम्णस्य मह्ना स जनास इन्द्रः ।। [8]

इन्द्र के द्वारा वृत्र का वध एक साथ कई कर्मो के ओर संकेत है इन्द्र ने वृष्टि करायी जिसकारण नदियाँ बहने योग्य बनी वृत्र वध से इन्द्र ने अंधकार का निवारण भी किया। इन्द्र का सोम रस प्रिय पेय है। जिसके पान से उनमें उत्साह और शौर्य की वृद्धि होती है तथा वे अपने वीरतापूर्ण कार्यो को सम्पन्न करने में सफल होते हैं। ऋग्वेद संहिता में इन्द्र के वीरतापूर्ण कार्यों में सरमा–पणि संवाद में उनकी भूमिका है। यह संवाद ऋग्वेद के दशम मण्डल का है यह कुल ग्यारह ऋचाओं में उपलब्ध है। पणि जो देवताओं के शत्रु थे पणियों में ऐश्वर्यमद में देवताओं की गाय चुरा ली। इन्द्र के आदेशानुसार सरमा जो देवताओं की शुनी (देवताओं की कुतिया) थी वह गायों को खोजने के लिए भेजी गयी। संवाद से पता चलता है कि सरमा रसा (नदी) को पार कर पणियों के अभेद स्थल पर पहुँच गई उसने पणियों को अपना परिचय दिया तथा गायों को छोड़ने की याचना की –

इन्द्रस्य दूतीरिषिता चरामि मह इछन्ती पणयो निधीन्वः ।[9]

पणियों को अपने स्वामी इन्द्र की शक्ति का परिचय करते हुए सरमा कहती है–

नाहं तं वेद दम्यं दभत्स, यस्येदं दूतीरसरं पराकात् ।
न तं गूहन्ति स्रवतो गभीरा, हता इन्द्रेण पणयः शयध्वे ।।[10]

ऐसा कहने पर भी पणि गायों को मुक्त करने को तैयार न हुए। उन्होंने (पणियों ने) पहले सरमा को लोभ दिया परन्तु सरमा अडिग रही पणि और सरमा संवाद में राजनीति के गूढ़ वार्त्ता का वर्णन हुआ है। इस संवाद कथा में पुरा काल में भी खोजने के लिए शुनी का प्रयोग किया जाता था, जो वर्त्तमान काल तक प्रयोग किया जाता है जिसे डॉग स्कार्ड कहते हैं। सरमा ने अपने अन्तिम सूक्त में कहा है कि 'हे पणियों तुम यहाँ से भाग जाओ तुम्हारी छिपायी गायें सत्य नियम का पालन करते हुए ऋषियों को प्राप्त हो जाएगी।'[11] यह संवाद दूती कर्म करते शुनी की दृढ़ता तथा इन्द्र के पराक्रम की पुष्टि करता है। इन्द्र को जन्मजात नेता माना गया है उसकी वेष–भूषा भी वीरोचित बतायी गयी है। इन्द्र के साथ मरूतगणों की स्तुति भी की गई है। मरूत् इन्द्र के सहयोगी है तथा आँधी–तूफान के देवता है इसका सीधा संबंध जलवृष्टि से है। इन्द्र के युद्ध सम्बन्धी सभी कार्यों में वे परम सहायक बताये गये है। मरूत् अपने पराक्रम से वनों, पर्वतों एवं पृथ्वी को भी हिला देते है। पर्वतों एवं मेघों को गति देकर समुद्र के पार करने में सामर्थ्य रखते हैं–

य ईखंयन्ति पर्वतान् तिरः समुद्रमर्णवम् ।[12]

मरूत् इन्द्र के परम मित्र हैं। इन्द्र का वर्णन बारम्बार शत्रुहन्ता एवं विजयकर्त्ता के रूप में आया है। युद्ध के मूल में लोभ या क्रोध तत्व विशेष रहता है।

वास्तव में युद्ध का कारण कामनाएँ हैं वैसे तो सामान्य मानव भी मन की शुद्धी के लिए युद्ध करता रहता है आस–पास के वातावरण से अथवा शत्रुओं से निरन्तर युद्ध चलता रहता है। युद्ध अनिष्ट और बुरे होते है इसी कारण अथर्ववेद में सब ओर से अभय की प्रार्थना की गई है। इस प्रार्थना के आरम्भ में कहा गया है–

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरो यः ।[13]

अथर्ववेद में नीति के अनुसार सबसे पहले सबों के प्रति सद्भावना व्यक्त की गई है। और सारी दिशाएँ मेरी मित्र हो जाए, कहा गया है–

सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ।[14]

बार–बार शान्ति की कामना में मूल भावना को उद्भूत किया गया है अथर्ववेद में अश्विनौ जो राष्ट्र के वाहक सेनापति हैं और राजा से प्रार्थना की गई है कि वे प्रजा को युद्ध से बचाएँ।

संज्ञानं नः स्वेभिः संज्ञानमरणेभि ।
संज्ञानमश्विना युवमिहास्यासु नि यच्छतम् ।।[15]

इस ऋचा में अरणं शब्द दूसरे के लिए प्रयुक्त हुआ है 'दूसरा' वह जिसे हम अच्छे न लग रहे हो। अथर्ववेद में बारम्बार शान्ति के प्रति आग्रह है यहाँ तक कि अन्तिम क्षण तक प्रजा के हित में एकता का संकल्प करना चाहिए क्योंकि युद्ध में भयंकर विभीषिका का दृश्य उपस्थित होता है वह प्राणी मात्र के लिए अच्छा नहीं होता । दिव्य संकल्पना से यह प्रयत्न करने की बात है कि युद्ध में बहुत लोगो के मारे जाने पर उठने वाले आर्तनाद पर विराम लग सकें–

सं जानामहै मनसा सं चिकित्वा मा युष्महि मनसा दैव्येन ।
मा घोषा उत्स्थुर्बहुले विनिर्हते मेषुः पप्तदिन्द्रस्याहन्यागते ।।[16]

शान्ति के सारे प्रयास करने पर भी यदि कोई पीड़ित किए बिना भी शान्तिपूर्ण जीवन में बाधा डाल रहा है तो उसके प्रति स्वाभाविक द्वेष उत्पन्न होगा। यदि द्वेष अन्तोगत्वा युद्ध का रूप धारण करता है, वेद में अत्याचार सहन की प्रेरणा नहीं दी गई है अपितु इस प्रकार के व्यक्ति को दण्डित करने तक नियंत्रित करने का दृढ़ संकल्प प्रदान किया गया है–

योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।[17]

यदि युद्ध थोप दिया गया हो तो पूरी शक्ति और निर्भयता से प्रतिपक्ष का प्रतिकार करने का निर्देश वेद में है। अथर्ववेद में बताया गया है कि युद्ध में सेना का नेतृत्व करने वाला सेनापति अग्नि के समान तेजस्वी और कुशल नेतृत्व करने वाला होना चाहिए। जो भी दुर्व्यवहार करे, हानि पहुँचाएँ उसका पूरी वीरता तथा पराक्रम से सेनापति प्रतिकार करें एवं उसका विध्वंस करे–

तान्त्सत्यौजाः प्र दहत्वग्निर्वैश्वानरो वृषा ।
यो नो दुरस्याद् दिप्साधाथो यो नो अरातियात् ।।[18]

सेनापति जो युद्ध में मुख्य रूप से राष्ट्र हित में शत्रु पर प्रहार करता है वह शत्रुओं को बंदी बनाने वाला तथा कठोर नियंत्रण करने वाला भी होता है। साथ ही आतंक एवं हिंसा फैलाने वालों को नियंत्रण में रखता है। अथर्ववेद में युद्धकला के सूक्ष्म एवं अत्याधुनिक कलाओं से मेल खाते वर्णन प्राप्त होते हैं जो स्पष्ट रूप से इस बात का संकेत है कि युद्धकला में वेद काल में भी हम आधुनिक तकनीक से सुसज्जित थे। अथर्ववेद में शत्रु सेना के विरूद्ध प्रत्येक दिशा में प्रतिरोध की व्यवस्था का संकेत प्राप्त होता है जिससे किसी भी स्थान से शत्रु प्रहार करने के लिए प्रवेश न कर सके। जैसे कि पूर्व दिशा से ललकारते हुए और उपक्षीण करने का प्रयत्न करे तो तत्काल उसका विध्वंस किया जाना चाहिए। इस संदर्भ में उल्लेखनीय तथ्य यह है कि मार्गरहित अन्तरिक्ष से शत्रु के आक्रमण की संभावना बतायी गयी है–

येऽध्वस्ताज्जुहति जातवेदो धुवाया दिशोऽभिदासन्त्धस्मान्ः ।[19]

साथ ही एक अन्य रोचक बात है कि यह आकाश युद्ध संभवतः विमान युद्ध रहा हो अर्थात् प्राचीन काल में भी विमानों से आक्रमण किया जाता रहा होगा।
एक वीर योद्धा अपने आपको हाथी सदृश बताता है तथा बातों से अपशब्द से उतेजित करने वालों को मच्छर सदृश बताया है। वह उद्घोषणा करता है कि 'मैं ऐसे शत्रुओं को भीड़–भाड़ वाले स्थान में फेंके गए छोटे कीड़े–मकोड़े के समान समझता हूँ।

ये मा क्रोधयन्ति लपिता हस्तिनं मशका इव ।
तानहं मन्ये दुर्हितान् जनं अल्पशयूनिव ।।[20]

इस ऋचा में दो बातों का सुलभ संकेत है यदि योद्धा का ध्यान भटकाने के लिए एवं उसे क्रोध से भर देने के लिए प्रतिपक्ष से बुरी बातें कही जाएगी परन्तु योद्धा उससे विचलित न हो तथा उसे तुच्छ समझे यह युद्ध नीति अभी भी अस्तित्व में है और युद्ध के दौरान हार रही सेना ऐसा प्रयोग करती है। दूसरा संकेत घरेलू गुप्तचरों से है जिन्हें कीड़े–मकोड़े बताया गया है यह आन्तरिक शत्रु है, ऐसे आन्तरिक शत्रुओं को राष्ट्रहित में दबा देना चाहिए। विशाल राष्ट्र की शक्ति के सामने ये कीड़े–मकोड़े हैं। वर्त्तमान में भी राष्ट्र की शक्ति को क्षीण करने के उद्देश्य से प्रतिपक्षी राष्ट्र ऐसा करता है। जिससे राष्ट्र की आन्तरिक गतिविधि पता हो तथा कभी–कभी प्रतिपक्षी राष्ट्र उपद्रव भी कराता है अभी वर्त्तमान में भी ऐसी नीति का प्रयोग होता है। योद्धा को हाथी सदृश बताया गया अर्थात् उसे अत्यंत मजबूत बताया गया है।
एक अन्य ऋचा में वर्णन मिलता है कि बलिष्ठ योद्धा शत्रुओं पर वार करने वाला होता है। योद्धा का प्रहार इतना तीव्र और तीक्ष्ण होता है कि शत्रु की मृत्यु अवश्म्भावी है। कहा गया है –

तपनो अस्मि पिशाचानां व्याघ्रो गोमतामिव ।
श्वानः सिंहमिव दृष्ट्वा ते न विन्दन्ते **न्यञ्चनम्** ।।[21]

इस ऋचा में 'न्य×चनम्' शब्द आया है जो इस बात को इंगित करता है कि शत्रु के आक्रमण से बचने के लिए भूमि के भीतर नीचे खंदक आदि जैसे स्थान बनाने के संकेत मिलते हैं।
अथर्ववेद में चोरी से युद्ध करने वाले, वनों, पर्वतों, कन्दराओं में छिपे शत्रुओं को ढूँढ–ढूँढ कर मार गिराने का वर्णन प्राप्त होता है यह क्रिया अभी भी सेना द्वारा चलायी जाती है जिसे 'सर्च ऑपरेशन' की संज्ञा दी जाती है। छिपे हुए शत्रुओं को ढूँढने में गुप्तचरों की भूमिका होती है राष्ट्र अपनी सुरक्षा व्यवस्था सुदृढ़ करने के लिए गुप्तचर नियुक्त करता है यह गुप्तचर सेना को सूचना देता है तथा सेना शत्रु का नाश कर देती है इसीकारण योद्धा कहता है –

न पिशाचै सं शक्नोभि न स्तेनैर्न वनर्गुभिः ।
पिशाचास्तस्मान्नश्यन्ति यमहं ग्राममाविशे ।।[22]

अर्थात् मैं जिस ग्राम में प्रविष्ट करता हूँ वहाँ से पिशाच अर्थात् क्रूर शत्रु नष्ट हो जाते हैं।
अथर्ववेद में गुरिल्ला युद्ध अर्थात् छिपकर युद्ध करने के संकेत मिलते है। 'गोरिल्ला' शब्द छापामार युद्ध के रूप में प्रयुक्त होता है ळनमततपससं शब्द स्पैनिश भाषा का है जिसका अर्थ लघु युद्ध होता है। यह युद्ध अनियमित सैनिकों के द्वारा शत्रुसेना पर पार्श्व से आक्रमण कर लड़े जाते हैं। यह युद्ध जल्दी से लड़ा जाता है। इन सैनिकों की कोई वेश–भूषा नहीं होती है और उद्देश्य छिपकर शत्रु पर प्रहार करना है।[23] अथर्ववेद में इसका संकेत अत्यन्त रोचक तथ्य है यह कौतूक का संचार करने वाला है। योद्धा ऐसे छिप कर युद्ध करने वाले के प्रति सावधान है वह कहता है कि जो कच्चा मांस खाने वाले राक्षसों के समान शत्रु है जो अमावस्या की काली रात को छिप कर हमें ढूँढ़ रहे हैं और प्रहार करना चाहते हैं मैं उन्हें अपने बल से नष्ट कर दूंगा।

य आगरे मृगयन्ते प्रतिक्रोशे ऽमावास्ये।
क्रव्यादो अन्यान् दिप्सतः सर्वास्तान्सहसा सहे ।।[24]

इस ऋचा में आगर शब्द प्रयुक्त किया गया है जो गृ (निगलना) धातु से निष्पन्न है। इसमें अंधेरे में युद्ध के संकेत हैं जो अभी भी गुरिल्ला वार में होते हैं जिसमें योद्धा की सूझ सावधानी एवं चुस्ती का बड़ा महत्त्व होता है। योद्धा अपने आस–पास हो रही हर चहल–पहल पर सूक्ष्मता से ध्यान देता है और अवसर प्राप्त होते ही शत्रु का नाश कर देता है।
अथर्ववेद में राजा को वीर सैनिकों का प्रेरणा स्त्रोत बताया गया है। राजा अपने सैनिको को शत्रुओं पर टूट पड़ते एवं दुर्ग आदि विनष्ट करने की प्रेरणा देता है। अथर्ववेद में अंतरिक्ष में शत्रुनाश के लिए ऊपर ही जाल बनाने का उल्लेख है–

अंतरिक्षं जालमासीज्जालदंडा दिशो महीः ।
तेनाभिधाय दस्यूनां शक्रः सेनामपावयत् ।।[25]

आकाश में जाल बनाने का अर्थ संभवतः विमानों का जाल हो जिसके द्वारा सेनापति शत्रु के विमानों का नाश करता हो। एक अभेद विशाल जाल का भी वर्णन है जिसमें एक ही साथ सैकड़ों की संख्या में शत्रु का नाश हो जाता था । सम्भव है कि यह जाल आयुध द्वारा निर्मित है जो अंधकार और घुटन उत्पन्न करता है और शत्रु बड़ी संख्या में धाराशायी हो जाता हो। इसी प्रकार के जाल का प्रयोग इन्द्र ने शत्रु नियंत्रण के लिए किया था –

तेनाहमिन्द्रजालेनामूंस्तमसाभि दधामि सर्वान् ।[26]

वर्त्तमान में सेना इस प्रकार के जाल निर्मित कर सकती है। खड़ग, बाण आदि आयुधों का वर्णन मिलता है जो अधिक संख्या में शत्रु के नाश का सामर्थ रखते थे। एक विशेष प्रकार के अस्त्र का वर्णन मिलता है जिसे होम के समान अग्नि उत्पन्न की जाती थी उसके द्वारा शत्रु का नाश किया जाता था –

धर्मः समिद्धो अग्निनायं होमः सहस्त्रहः ।
भवश्च पृश्निबाहुश्च शर्व सेनाममूं हतम् ।।[27]

अथर्ववेद में मनोवैज्ञानिक युद्ध के विषय में बताया गया है। एक प्रकार के विशेष प्रशिक्षण से शत्रुसेना को हतोत्साहित किया जाता

था। विजय को सुनिश्चित करने हेतु कुशल सम्मोहन विद्या का प्रयोग भी किया जाता था। युद्ध में सम्मोहन विद्या का प्रयोग होता था। शत्रु सेना को तोड़ने के लिए ऐश्वर्य के साधन पहुँचाएँ जाते थे। युद्ध करते अत्यधिक थकावट, समृद्धि का अभाव, आलस्य और मोह उत्पन्न कर शत्रु को निष्क्रिय बनाया जाता था –

सेदिरूग्रा व्यद्धिरार्तिश्चानपवाचना ।
श्रमस्तन्द्रीश्च मोहश्च तैरमूनभि दधामि सर्वान् ।।[28]

शत्रु का ध्यान और उत्साह भंग करने हेतु दुंदुभि से तुमुल शब्द उत्पन्न किए जाते थे। नगाड़े की ध्वनि कर शत्रु को परास्त किया जाता था –

उच्चैर्घोषो दुन्दुभिः सत्वनायन् वानस्पत्यः संभृत उस्त्रियाभिः ।
वाचं क्षुणुवानो दमयन्त्सपत्नान् सिंह इव जेष्यन्नभि तंस्तनीहि ।।[29]

वेदों में जिस प्रकार की युद्ध कला दृष्टिगत होती है वह वर्त्तमान युद्ध कौशल के समीपवर्ती है साथ ही कई वर्णन युद्ध और सेना को संमृद्ध एवं सुदृढ़ बनाने की युक्ति देते हैं। मानव को शान्ति का मार्ग कदापि नहीं छोड़ना चाहिए लेकिन यदि कोई शत्रु सामने आ जाए एवं कष्ट पहुँचाए तो उसका अन्त करना समीचीन है। शक्ति का प्रदर्शन राष्ट्रहित में होना सर्वाधिक श्लाघनीय है।

संदर्भ

1. मनु स्मृति – 12/97 का उत्तरार्ध
2. निरूक्त –यास्क –10/8/1
3. निरूक्त –यास्क –10/8/12
4. निरूक्त –यास्क –10/8/13
5. ऋग्वेद–संहिता –2/12/2
6. ऋक्सूक्त निकर –डा. उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', पृष्ठ सं. –92
7. ऋग्वेद–संहिता –2/12/3
8. ऋग्वेद–संहिता –2/12/1
9. ऋग्वेद–संहिता –10/108/2 का पूर्वार्ध
10. ऋग्वेद–संहिता –10/108/4
11. ऋग्वेद–संहिता –10/108/11
12. ऋग्वेद–संहिता –1/19/7 का पूर्वार्ध
13. अथर्ववेद–संहिता –19/15/6 का पूर्वांश
14. अथर्ववेद–संहिता – 19/15/6 का अंश
15. अथर्ववेद–संहिता –7/52/1
16. अथर्ववेद–संहिता –7/52/2
17. अथर्ववेद–संहिता –3/27/1 का उत्तरार्ध
18. अथर्ववेद–संहिता –4/36/1
19. अथर्ववेद–संहिता –4/40/6 का पूर्वार्ध
20. अथर्ववेद–संहिता –4/36/9
21. अथर्ववेद–संहिता –4/36/6
22. अथर्ववेद–संहिता –4/36/7 का उत्तरार्ध
23. www.bharatdiscovery.org
24. अथर्ववेद–संहिता –4/36/3
25. अथर्ववेद–संहिता –8/8/5
26. अथर्ववेद–संहिता –8/8/8 का उत्तरार्ध
27. अथर्ववेद–संहिता –8/8/17
28. अथर्ववेद–संहिता –8/8/9
29. अथर्ववेद–संहिता –5/20/1